द्वितीय खण्ड

श्री श्री माँ आनन्दमयी

प्रथम अध्याय

नवद्वीप में सात दिन

सन् १९३६ ई. । दिसम्बर का महीना । आगे बड़े दिनों की छुट्टी होनेवाली है । इस बार छुट्टियों में कहाँ जाऊँगा, यह निश्चय नहीं किया था । बन्द होने के पहले ही सुना था कि श्री श्री माँ नवद्वीप आयी हैं, पर उनसे मुलाकात करने की प्रबल आकांक्षा नहीं उत्पन्न हुई थी । जाड़े के मौसम में बाल-बच्चों के साथ कहीं यात्रा करना बड़ा कष्टदायक होता है । इसके अलावा मेरी छुट्टी के पूरे दिनों तक माँ नवद्वीप में रहेंगी, इस सम्बन्ध में कोई निश्चय नहीं था ।

बाद में सुना कि मेरे मित्र श्रीयुक्त यतीन्द्र मोहन दासगुप्त सपत्नीक नवद्वीप रवाना हो गये हैं । श्री श्री माँ की अनुमति बिना लिए अचानक वहाँ तक जाना उचित होगा या नहीं, इस सम्बन्ध में ऊहापोह करने लगा । बहरहाल, २४ दिसम्बर, सन् १९३५ ई. गुरुवार को सवेरे श्रीयुक्त भूपति नाथ मित्र एक पत्र लिए मेरे यहाँ आये । पत्र नवद्वीप से यतीन्द्र बाबू ने भेजा है । उस पत्र में अन्य समाचारों के अलावा यह भी लिखा था कि श्री श्री माँ शायद जनवरी महीने के प्रथम सप्ताह तक नवद्वीप में ठहरेंगी। यह समाचार सुनकर मन व्याकुल हो उठा । सोचा एक बार अगर नवद्वीप चला जाय तो कैसा रहे । नयी जगह और माँ का दर्शन दोनों ही हो जायगा। मुझे लगा जैसे इस पत्र के माध्यम से माँ ने मानो मुझे बुलाया है पत्र में ऐसा कोई आभास नहीं था । लेकिन लग ऐसा ही रहा था जबकि माँ की सारी गतिविधि

अनिश्चित है । यतीन बाबू जब यह लिख रहे हैं कि १०–१५ दिन माँ नवद्वीप में रहेंगी तब मेरे जाने की बात को समझ लिया जा सकता है । भूपति बाबू को विदा करने के बाद मैंने अपनी पत्नी से परामर्श किया । अन्त में तय हुआ कि कल ही नवद्वीप रवाना हुआ जाय।

२५ दिसम्बर, शुक्रवार को कलकत्ता मेल से रवाना हुआ । रात ३ बजे रानाघाट स्टेशन पर दो घण्टे प्रतीक्षा करने के बाद नवद्वीप वाली गाडी मिली । कृष्णनगर में गाड़ी बदलकर दूसरे दिन ८.३० बजे नवद्वीप घाट स्टेशन आया । नाव से इस पार आकर हेतमपुर के महाराजा की धर्मशाला की ओर चल पड़े । दूर से ही धर्मशाले के पास परिचित चेहरों की भीड़ देखकर मन प्रसन्न हो उठा । दूर से ही देखा कि श्री श्री माँ अपने कमरे से बाहर आकर बरामदे में मुँह धो रही हैं । यतीश बाबू की लड़की 'बुनी' मुँह धुला रही है।

धर्मशाला में आने पर श्रीयुक्त यतीन बाबू और श्रीयुक्त राधिका बाबू[1] के साथ मुलाकात हुई । राधिका बाबू ने कहा–"आपको आते देख माँ कमरे से बाहर निकली और बोली – 'अमूल्य की तरह देखने में आ रहा है ।' पर मैं आपको पहचान नहीं सका था ।"

श्री श्री माँ जबतक मुँह धो रही थीं तब तक मैं सीढ़ी पर खड़ा रहा। जब उठकर खड़ी हुई तब मैंने प्रणाम किया ।

माँ ने कहा – "मैं पहले ही सोच रही थी कि पिताजी का (अर्थात् मेरा) बन्द (अवकाश) बेकार जायगा क्या ?"

मैं मन ही मन कह उठा – "माँ, तुमने मन में सोचा तभी तो आज यहाँ आ सका हूँ ।"

माँ ने आगे कहा – "सुना कि कल दोपहर को १२ बजे ढाका से रवाना हुए हो । सोच लो कि अभी तक रास्ते में ही हो, क्योंकि अभी तुरंत हम लोग नाव में घूमने चलेंगे ।"

१. श्रीयुक्त राधिकानाथ तरफदार, एम. ए., बी. एल. । आप ढाका में वकालत करते हैं । माँ के भक्त हैं ।

मैंने सोचा–'तथास्तु ।'

माँ कमरे के भीतर चली गयीं । यतीन बाबू और राधिका बाबू से दो–चार बातें करने के बाद अपना सामान एक कमरे में रखने का प्रबन्ध करने लगा । धर्मशाला स्थित कुएँ पर हाथ–पैर धोने के बाद थोड़ा जलपान किया और तब माँ के पास जाकर बैठ गया । अभी माँ के साथ बातचीत कर ही रहा था कि श्रीयुक्त त्रिगुणा बाबू[1] यतीश बाबू आदि आये । माँ ने इन लोगों से नाव ठीक करने को कहा ।

त्रिगुणा बाबू ने कहा – "माँ, आप चलने को तैयार हो जाँय तो नाव तुरंत ही ठीक हो जायगी ।"

माँ ने कहा – "तुम लोग आगे बढ़ो । मैं आ रही हूँ ।" इतना कहकर माँ हँस पड़ी ।

त्रिगुणा बाबू, प्राणकुमार बाबू किराये की नाव ठीक करने के लिए बाहर चले गये । मैं माँ के पास बैठा रहा । माँ ने मुझसे कहा– "देखो, तुम लोग, जो ढाका से आये हो, वे सब एक नाव पर जाँय। यतीश के घर के सभी लोग एक नाव पर जायेंगे । इस प्रकार जाने पर लोग अपने–अपने बाल–बच्चों का ख्याल रखेंगे, वर्ना बच्चों को परेशानी होगी ।"

माँ ने पुनः मुझसे पूछा– "तुम नहा चुके हो ?"

मैं–हाँ, माँ ।

माँ–स्नान कितनी देर के लिए ? यह स्नान करने पर पुनः स्नान करना पड़ता है । एक बार स्नान करने से स्नान का अन्त नहीं होता। इतना कहकर माँ हँसने लगीं ।

---

१. डा. श्री त्रिगुणानाथ वंद्योपाध्याय, एम. ए. । आप श्रीरामपुर कालेज के प्रोफेसर है ।

मैं माँ की बातों का गूढ़ अर्थ समझने का प्रयत्न करने लगा। सोचने लगा–क्या माँ ने हम लोगों के अशुद्ध चित्त को लक्ष्य करके ऐसा कहा ? वास्तव में बात तो सही है । माँ के पास बैठा हूँ। इस वक्त मन में कोई पंकिलता नहीं आ रही है । कुछ देर बाद जब माँ के पास से चला जाऊँगा तब नाना प्रकार की चिन्ताएँ सताने लगेंगी। वैषयिक भाव चित्त को कलुषित करने लगेंगे । माँ का एक बार दर्शन कर हमेशा के लिए शुद्ध–बुद्ध नहीं हो पा रहा हूँ । शायद इसीलिए हम लोगों को बार–बार "स्नान" की आवश्यकता होती है । बार–बार प्रयत्न करके शुद्ध होना पड़ता है ।

प्रणाम का रहस्य

ठीक इसी समय शिशिर आदि काफी लोग कमरे में आ गये। शिशिर न जाने किस विषय को लेकर माँ से बहस करने लगा । जब माँ से जीत नहीं सका तब गर्दन झुकाकर सिर खुजलाने लगा । यह देखकर माँ ने कहा–"देखो, सब कितना सुन्दर है । अपनी गलती समझ जाने पर सिर अपने आप झुक जाता है । जब लोग दिशाहीन हो जाते हैं तब सिर खुजलाते है । अगर उस समय गौर करें तो देखेंगे कि उनका सिर एक ओर झुका हुआ है । यही है– प्रणाम का रहस्य । प्रणाम करते समय लोग सिर क्यों झुकाते हैं ? वह तब अपनी क्षुद्रता समझ लेता है । जिसके आगे वह अपना सिर झुका रहा है, उसकी तुलना में वह कितना तुच्छ है, यह वह समझ लेता है । जब तक अहम बुद्धि रहती है तब तक गर्दन सीधा करके रखते हैं । सिर ऊँचा रखना गर्व का भाव, अहंकार का भाव प्रदर्शित करता है । नीचा सिर दीनता को प्रकट करता है ।"

माँ इन बातों को बड़े भाव से बता रही थीं जिसके कारण हम हँस पड़े।

कुछ देर बाद हम लोग नाव पर आये । पता नहीं, किस बात पर नाराज होकर शिशिर धर्मशाला वापस चला गया । उसे बुलाने के लिए दो बार आदमी भेजा गया, पर वह वापस नहीं आया । इसी समय राधिका बाबू हम लोगों का साथ देने के लिए आ गये। नाव चल पड़ी । हम लोग बहाव के उल्टी ओर चल रहे थे । नाव पर ही खाने-पीने का प्रबन्ध हो रहा था । कचौड़ी, पुरी, खीर आदि। त्रिगुणा बाबू कीर्तन गाने लगे । उनका साथ यतीश बाबू आदि देने लगे । ४-५ नावें एक साथ बँधी चल रही थीं । श्री श्री माँ एक नाव से दूसरे नाव पर जा-जाकर सभी को संतुष्ट कर रही थीं । इस प्रकार २.३० बजे तक उफान की ओर चलते रहें । बाद में गंगा किनारे नावों को बांध दिया गया । हम लोग किनारे उतर पड़े । कुछ लोग गंगा में स्नान करने लगे । माँ को रेती पर भोग दिया गया । हम लोग भी रेती पर प्रसाद खाने लगे ।

सेवा करना बड़ा कठिन कार्य है

भोजन के पश्चात् हम लोग माँ को घेर कर बैठ गये । तरह-तरह की बातें होने लगीं । उत्तरकाशी जाते समय धरासू नामक एक जगह है । माँ ने कहा-"वहाँ मैंने देखा कि गंगा के स्रोत में बड़े-बड़े पत्थर पड़े थे । पत्थरों का ऊपरी भाग समतल और प्रशस्त था। गंगा का पानी उसके ऊपर से कलकल कर बह रहा है । यह देखकर मैं पानी में उतरकर इस पत्थर से उस पत्थर पर उछलकर जाने लगी। आगे एक बड़ा पत्थर देखकर बोली कि इस स्थान पर आटा सान कर रोटी बनाया जाय तो अच्छा रहेगा । क्योंकि यह पत्थर समतल है और हाथ बढ़ाते ही गंगा का पानी मिल जायगा । यह बात सुनकर ज्योतिष वहाँ आटा सानने लगा । पत्थर देखनें में भले साफ-सुथरा हो, पर यात्री गण हमेशा वहाँ मल-मूत्र करते हैं । बहरबाल ज्योतिष उस पत्थर को गंगा जल से खूब अच्छी तरह धोकर आटा सानने

लगा । बाद में उसी पत्थर पर आग सुलगा कर रोटी बनाने लगा। वहाँ लकड़ी की कमी नहीं थी, क्योंकि गंगा के स्रोत में अनेक लकड़ियाँ बहकर आ रही थीं । बस, उन्हें पकड़ना पड़ता है । आग के ताप से जब पत्थर गरम हो गया तब मैंने देखा कि पत्थर के छोटे–छोटे छेद में विष्ठा है । अब तक भीगा था, इसलिए दिखाई नहीं दे रहा था । अब गरम हो जाने के कारण उसके प्रत्येक शिरा में विष्ठा दिखाई देने लगा है । मैं बैठी हुई यह देख रही थी, पर ज्योतिष ने इस ओर गौर नहीं किया । उसने उस विष्ठा वाली रोटी मुझे खिलायी । मैंने अम्लान भाव से खायी ।''

इतना कहकर माँ खूब हँसने लगीं । हम लोग भी साथ देने लगे । सेवा करते समय कितनी सतर्कता बरतनी चाहिए, माँ ने इस कहानी के जरिये समझाया । साथ ही यह भी समझ में आ गया कि भावग्राही जनार्दन ।

दल भ्रष्ट होने पर पहले की तरह मेल नहीं होता

यह पहले कहा जा चुका है कि शिशिर नाराज होकर धर्मशाला वापस चला गया था । हम लोगों ने सोचा था कि वह अब नहीं आयेगा । लेकिन भोजन के थोड़ी देर बाद देखा गया कि वह नाव से आ रहा है । सभी उसका मजाक उड़ाने लगे । शायद वह मन–ही–मन लज्जित हो रहा था । किसी के साथ मेल न कर पाने के कारण अकेला ही नाव लेकर इधर–उधर चक्कर काटने लगा ।

उसे इस तरह करते देख माँ ने कहा–''एक बार दल भ्रष्ट हो जाने पर पुनः पहले की तरह मेल नहीं होता । मिलने पर बाधाएँ आती हैं । धर्म–मार्ग में भी यही स्थिति है । धर्म भाव लेकर कुछ दिन चलने पर पुनः गृहस्थी के मामले में पहले की तरह मन नहीं लगता ।''

सुना था कि माँ ने विमला माँ और निर्मला माँ को ले आने के लिए अवनी मोहन शर्मा को कलकत्ता भेजा है । आज ही वे लोग आने वाले हैं । इसीलिए माँ आज शाम को धर्मशाला में मौजूद रहेंगी। इधर हम लोग सोच रहे थे कि शाम तक धर्मशाला पहुँचना सम्भव नहीं होगा, कारण भोजनादि करते–करते शाम के ५ बज गये । धर्मशाला के घाट तक पहुँचने में कम से कम १/२ घण्टे लगेंगे । सभी ऐसा ही अन्दाज कर रहे थे । बाद में देखा गया कि ५ बजे रवाना होकर हम लोग शाम को घाट पर पहुँच गये । इतनी जल्दी कैसे आ गये, यह सोचकर चकित रह गये ।

संध्या के समय श्री श्री माँ का दर्शन करने के लिए एक संन्यासी आये । उनकी आयु ४० या ४२ वर्ष के लगभग थी । बड़े शान्त और विनीत लगे । माँ ने उन्हें बैठने के लिए आसन देने को कहा। इसके बाद कुछ कहने के लिए अनुरोध किया ।

पर साधु ने विनीत भाव से कहा–"माँ मैं भला क्या जानता हूँ । आप ही कुछ कहिये, हम लोग सुनें ।"

साधु के साथ माँ ने कोई बातचीत नहीं की । सुना कि संन्यासी हरिद्वार स्थित कैलास आश्रम में रहते हैं । बरामदे में कुछ देर बातचीत होने के बाद हम लोग कमरे के भीतर आकर बैठ गये ।

देवता के स्पर्श से शुचि–अशुचि का विचार

कमरे के भीतर जब सभी लोग यथास्थान बैठ गये तब श्रीयुक्त नीतीशचन्द्र गुहा ने माँ से प्रश्न पूछा–"माँ, देवता को स्पर्श करते वक्त शुचि–अशुचि का विचार कैसा ? माँ के निकट जाऊँगा, माँ को स्पर्श करूँगा । यहाँ शुचि–अशुचि विचार क्यों आता है ? मेरी माँ मुझे इन बातों पर विचारने को कहती हैं, पर मुझे इसमें कोई तथ्य नहीं मालूम पड़ता ।"

माँ–देवता को स्पर्श करते समय यह अनुभव हो कि वे माँ हैं तब यह विचार नहीं आता । लेकिन यह स्थिति कितने लोगों में होती है ? इसीलिए शास्त्र की बात मानना चाहिए । अगर तुम लोगों में वास्तविक रूप से यह अवस्था आ गयी हो यानी देवता को माँ के रूप में सचमुच सोच लेते हो तो विचार करने की आवश्यकता नहीं हैं वर्ना विचार करना ही पड़ेगा ।

निर्मला माँ का नवद्वीप आगमन

जब इस प्रकार की बातें चल रही थीं, ठीक इसी समय निर्मला माँ अपने पति "हेमभाई" के साथ धर्मशाला में आयीं । अवनी बाबू भी आये । उन्होने कहा कि विमला माँ कल तक यहाँ आ जायेंगी ।

निर्मला माँ आते ही माँ की गोद में गिर पड़ी । माँ भी उन्हें प्यार करने लगीं । श्री हेमभाई को बैठने के लिए अलग से आसन दिया गया । ये लोग दक्षिणेश्वर आद्यापीठ से आ रहे हैं । निर्मला माँ के बारे में जो बातें ज्ञात हुई, वे इस प्रकार हैं –

निर्मला माँ सामान्य घर की बहू हैं । चार सन्तानों की माँ बनीं, पर इन दिनों केवल एक ही जीवित है । इन दिनो गृहस्थी की स्थिति अच्छी है । एक दिन दोपहर को न जाने किसी उत्सव के उपलक्ष्य में आद्यापीठ गयी थीं । साथ में पति भी थे । वहाँ अन्नदा ठाकुर की भावावस्था देखकर इन्हें अपने गृहस्थ जीवन के प्रति विरक्ति हो गयी । इस दिन आप घर वापस नहीं लौट सकीं । एक अनजाने नशे में मग्न रहीं । दूसरे दिन जब घर वापस आयीं तब तक नशा सवार था । इसके बाद अक्सर भावावेश में रहने लगी । कुछ दिनों बाद एक पुत्र को इन्होनें जन्म दिया । सन्तान की सेवा और देख–रेख में सारा समय गुजरने लगा । साधन–भजन करने का मौका नहीं मिलता था । इसी से दुःखी होकर सजल नयन से गुरु के निकट प्रार्थना की– "ठाकुर, यह शिशु तुम्हारा दान है, तुम इसे ग्रहण करो । इसके पीछे मैं तुम्हारी याद नहीं कर पाती ।"

कुछ दिनों के बाद बच्चे की मौत हो गयी । बच्चें की मौत के बाद निर्मला माँ अपने को शाप–मुक्त समझने लगीं । शिशु के श्मशान पर मठ की स्थापना करने के बाद वे अपने पति के साथ गुरुदेव के आश्रम यानी आद्यापीठ चली आयीं । निर्मला माँ स्वभाव से निर्जनता पसन्द करती हैं, इसलिए अन्नदा ठाकुर ने आद्यापीठ से कुछ दूर एक कुटिया बनवाकर उसमें रहने का आदेश दिया । आप अब तक उसी कुटिया में रहती आयी हैं । आजकल आपके पति विभिन्न स्थानों में इन्हें साथ लेकर जाते हैं। गुरु महिमा का प्रचार और आद्यापीठ आश्रम की उन्नति करना शायद इनका एकमात्र उद्देश्य है ।

निर्मला माँ को देखने पर ऐसा लगा जैसे वे अत्यन्त शान्त प्रकृति की हैं । आवाज में मीठापन और सरलता है । अवनी बाबू इनके भक्त हैं ।

इन लोगों के जलपान कर लेने के बाद कीर्तन आरम्भ हुआ। वे रोने लगीं । यह देखकर माँ ने कीर्तन बन्द कर देने का आदेश दिया । रात के ११/१२ बजे हम लोग सोने गये ।

श्री श्री माँ की आँखों में चोट के निशान

२७ दिसम्बर, १९३६ ई. । आज भोर के समय माँ को प्रणाम करने गया । यतीश बाबू की लड़कियाँ कीर्तन कर रही थीं । कीर्तन करने के बाद सब अपने–अपने कार्य में लग गये । मैं भी हाथ–मुँह धोने के बाद माँ के पास आकर बैठ गया । निर्मला माँ आज सवेरे धर्मशाला में नहीं आयीं । वे धर्मशाला के पास ही एक अलग मकान में ठहरी हुई हैं ।

हम लोग माँ के पास बैठे थे, ठीक इसी समय एक वैष्णवी आयी । रंग काला और लम्बे कद की । हाथ में एकतारा । माँ ने इनका नाम 'एकतारा' रखा है

कल मैंने माँ की आँखों में चोट के काले दाग को देखकर पूछ था–"माँ, आपकी आँख में क्या हुआ है ?"

माँ ने कहा था–"नवद्वीप में आने पर सीढ़ी से फिसलकर गिर पड़ी थी । सिर में चोट लग गयीं ।" सिर के दाहिनी ओर चोट के निशान थे ।

माँ ने कहा था–"यहाँ आने के बाद एक दिन अधिक रात गये पेशाब करने के लिए बाहर निकली । साथ में 'बुनी' थी । बाहर जरूर आ गयी, पर अच्छी तरह आँखे नहीं खुली थी, क्योंकि मुझमें यह एक भाव है कि अगर एक बार अच्छी तरह आँखें खोल दूँगी तो फिर पलक बन्द नहीं कर पाती । 'बुनी' मेरे पीछे–पीछे आ रही थी । वह बच्ची है, मेरी हालत कैसे समझ सकती है ? रायपुर (देहरादून) के मन्दिर में जब थी तब मेरे साथ–साथ ज्योतिष हर वक्त रहता था । वहाँ के मन्दिर की सीढ़ियाँ, इस धर्मशाले की सीढ़ियों से खराब थीं । लेकिन वहाँ कभी नहीं गिरी । इसका कारण यह है कि कहीं जाने पर ज्योतिष मेरे आगे–आगे चलता था । मैं उसके पीछे–पीछे चलती थी । आँखे भले ही पूरी तरह से न खुलने पर भी ज्योतिष के चलने के ढंग के आधार पर मार्ग की स्थिति समझ लेती थी । बहरहाल उस दिन बरामदे से आते समय मैंने हवा में पैर बढाया और बरामदे से नीचे लुढ़क गयी । सिर पर हाथ फेरते ही ज्ञात हुआ कि गुमटा उभड़ आया है । कोहनी छील गयी है । सिर को दबाती हुई बिछौने पर आकर लेट गयी ताकि कोई देख न सके । हाथ में चोट लगी है, इसे कोई देख नहीं सका । दूसरे दिन गुमटा पिचक गया है । लेकिन आँखों के नीचे काली रेखा उभड़ी हुई है । यहाँ आने के पहले कोई गिर पड़े, उसके पहले ही मैं गिर पड़ी ।"

एक भक्त–माँ, शायद इसीलिए कोई अब तक सीढ़ी से नहीं गिरा ।

माँ–आज तक कोई नहीं गिरा, यह कह सकते हो ।

माँ की आँखों के नीचे काला दाग देखकर वैष्णवी ने माँ से पूछा–"माँ, तुम्हारी आँखों में क्या हुआ है ?"

माँ–नवद्वीप के जो कर्त्ता–धर्त्ता हैं, उन्होंने मेरी आँखों में काजल लगाया है । अपना अंगराग दिया है ।

सभी लोग यह सुनकर हँस पड़े ।

वैष्णवी–बायी आँख लेकिन ठीक है ।

माँ–हाँ, केवल दक्षिण अंगे में ही उन्होंने अंगराग लगाया है ।

इतना कहकर माँ खूब हँसने लगीं ।

संस्कार के अनुसार विचार

श्रीयुक्त अटल बिहारी भट्टाचार्य, स्वामी शंकरानन्द, श्रीयुक्त नीरद बाबू आदि कमरे में हैं । नीरद बाबू आज ही नवद्वीप आये हैं । आप राजशाही में नौकरी करते हैं । माँ के साथ आपका परिचय है । बड़े शान्त प्रकृति के व्यक्ति हैं ।

माँ ने उनसे कहा–"इस बार राजशाही जाकर तुम्हारी खोज करती रही, पर तुमसे मुलाकात नहीं हुई ।"

अटल बिहारी बाबू ने नीरद बाबू के बारे में कहा–"यह मेरा छात्र है ।"

माँ–अच्छा ! तुमने इसे पढ़ाया हैं ? पहले तुम्हारे छात्र मेरे मुँह से संस्कृत के श्लोक सुनकर कहा करते थे–'हमारे मास्टर साहब (अर्थात् अटल बाबू) इनके पास आते–जाते हैं । उन्होंने इन्हें यह सब श्लोक सिखाया है ।'

इतना कहकर माँ खूब हँसने लगीं । आगे माँ ने कहा–"सिर्फ यही नहीं, वे सब यह भी कहते–'यह नशा वगैरह भी करती हैं । देखते नहीं, इनकी आँखें कितनी लाल हैं, मुँह की हालत देखो । ठीक नशेबाजों की तरह ।'

सभी खूब हँसने लगे ।

माँ पुनः कहने लगीं–उनकी गलती नहीं थी । सभी अपने–अपने संस्कार के अनुसार विचार करते हैं, मेरी वेष–भूषा देखकर तरह–तरह के लोग तरह–तरह की बातें करते हैं, इसमें आश्चर्य की क्या बात हैं ? एक बार की बात हैं । हावरा स्टेशन पर विमला माँ और मैं गाड़ी की प्रतीक्षा में बैठे थे । दोनों दो दिशाओं की ओर जायेंगे । दोनों के बाल बिखरें थे और सिर पर सिन्दूर पोता हुआ था । हालत समझ सकते हो । हम लोग दूर–दूर थे । मैंने विमला के पास जाकर कहा–'आइये माताजी, हम लोग पास–पास बैठें ।' यही किया गया । बाद में देखा कि दो मेम साहब तिरछी नजर से हमें देख रहीं थी और मंद–मंद मुस्कुरा रही थीं । हम लोग जहाँ बैठे थे, वहीं से टहलते हुए वे आगे जा रहे थे और पीछे वापस आ रहे थे । हमारी ओर देखते हुए फुसफुसकर न जाने क्या कह रहे थे । यह दृश्य देखकर मैंने विमला माँ से कहा कि आओ, हम दोनों खूब जोर से हँसे । इतना कहकर हम अट्टहास कर उठे । उस हँसी को देखकर वे भौंचक्के रह गये ।''

माँ इसी कहानी को इतने सुन्दर ढंग से कह रही थीं कि हम लोग भी हँस पड़े । माँ ने पुनः कहा–इसके लिए इन्हें (मेमों को) दोष नहीं दिया जा सकता । वे अपने संस्कार के अनुसार बातें कर रही थीं ।

भक्तों के साथ माँ का व्यंग्य–परिहास

कुछ देर बाद नीतीश बाबू ने आकर माँ से कहा–''माँ, शंकरानन्द स्वामीजी अपना फतुही एक व्यक्ति को दान में देकर स्वयं नंगे बदन खड़े हैं ।''

माँ ने कहा–''पिताजी ने ठीक किया है । स्वामी का काम त्याग का होता है ।''

यह बात सुनकर स्वामी शंकरानन्द ने अपने त्याग की घटना तुच्छ बनाने के लिए कहा–"इस प्रकार का दान करने में हर्ज क्या है । एक पुराना कुर्ता गया, माँगने पर अब नया कुर्ता मिलेगा ।"

यह बात सुनकर माँ हँसती हुई बोलीं–"तुम शायद नयी चीजों के स्वामी हो ?"

इस बात पर खूब हँसी हूई । ठीक इसी समय एक भक्त स्नानकर श्री श्री माँ का पादोदक ग्रहण करने के लिए पूजा पात्र में पानी लेकर आया और माँ के चरण से स्पर्श कराया ।

माँ ने पूछा–"पिताजी, तुमने कुछ खाया है ? जाओ, जाकर कुछ खा लो ।"

माँ की स्नेहपूर्ण बातें सुनकर भक्त गद्‌गद होकर बोला–"मेरे खाने की चिंता क्या है ।" पादोदक पात्र को ऊपर हवा में उठाते हुए पुनः कहा–"यह तो मेरी खाने की सामग्री है । इसके रहते और किसी चीज की जरूरत नहीं ।"

माँ हँसकर बोली–"केवल चरणामृत से पेट नहीं भरेगा ।"

इस बात से सभी लोग एक बार पुनः हँस पड़े और भक्त लज्जित हो उठा ।

समय काफी हो जाने के कारण हम लोग गंगा में स्नान कर होटल में भोजन करने चले गये । बाद में लोग मुझे उलाहना देने लगे । फलस्वरूप शाम से सभी के साथ धर्मशाले में भोजन करने लगा । इतने लोगों के भोजन का सारा व्यय श्रीयुक्त शचीन बाबू को ही देना पड़ता था ।

श्रीयुक्त धनंजय भट्टाचार्य और श्री श्री माँ

आज तीसरे पहर श्री श्री माँ गंगा में नौका विहार करने नहीं गयीं । धर्मशाले में काफी लोग आ गये । माँ गंगा की ओर बरामदे में बैठी रहीं ।

ठीक इसी समय श्रीयुक्त धनंजय भट्टाचार्य नामक एक प्रौढ व्यक्ति श्री श्री माँ से मिलने के लिए आये । कभी आप बहरमपुर में अध्यापक थे । आजकल पेन्शन लेकर नवद्वीप में रह रहे हैं । आप काशी के प्रसिद्ध योगी श्यामाचरण लाहिड़ी महाशय के शिष्य हैं ।

स्वामी शंकरानन्द ने भट्टाचार्य महाशय का परिचय दिया । भट्टाचार्य महाशय ने माँ को संबोधन करते हुए कहा–"माँ, जीवन में काफी उपार्जन कर चुका हूँ । कई लड़के–लड़कियाँ । सभी लड़के नौकरी पर लगे हैं और खुशहाल है । लड़कियों का विवाह अच्छे परिवार में हुआ है । कहने का आशय यह है कि अब मुझे संसार में कुछ करना नहीं रह गया । अब मेरे दिन नजदीक आ रहे हैं । अब यही इच्छा होती है कि 'माँ–माँ' कहते हुए प्राण निकले । क्या मुझे माँ की कृपा प्राप्त होगी ?"

माँ–हम लोग 'माँ–माँ' कहकर पुकारते हैं, यह भी तो उनकी कृपा है ।

वृद्ध–माँ तो पाषाणी है, कितना पुकारता हूँ, पर कहाँ उनके दर्शन होते है ।

माँ–पाषाण भी गल जाता है । रोने–धोने पर माँ क्या बिना आये रह सकती है ? देखा होगा, जब बच्चे रोते हैं तब काम छोड़कर दौडी हुई आती हैं । हाँ, रोना ठीक–ठीक होना चाहिए । वे सर्वदा हमारी ओर कान–आँख लगाये बैठी हैं । जब हम सचमुच व्याकुल हो उठते हैं तब वे आकर दर्शन देती हैं ।

आगे भट्टाचार्य महाशय ने कहा–"माँ, मैंने एक बार अपने गुरुदेव से पूछा था कि मन के विकार कैसे दूर होते हैं ? उत्तर में उन्होंने कहा था कि सुन्दरी स्त्री को मातृभाव में दर्शन और पूजा करने से मन के विकार दूर हो जाते हैं ।"

"एक बार मैं काशी में भास्करानन्द स्वामी से मुलाकात करने गया था । वे आमतौर पर किसी से मिलते नहीं थे । मैंने जाकर उन्हें ज्यों ही प्रणाम किया त्यों ही वे लाठी उठाकर मारने को तैयार हुए । मैंने उनके चरण पकड़ कर कहा–"बाबा, इस काशीधाम में तुम्हारे हाथ से मार खाकर अगर मेरे प्राण चले जायें तो यह मेरे लिए सुख का विषय होगा । मैं आपका चरण नहीं छोड़ूंगा । आपकी जो इच्छा हो, कर सकते हैं ।" इन बातों को सुनकर स्वामी भास्करानन्द संतुष्ट हुए और मेरा परिचय पूछा, मैंने अपना परिचय देकर जिन यौगिक–क्रियाओं को करता हूं, उसे बताया । उन्होंने दो–एक क्रिया दिखाते हुए सहस्रार में ध्यान करने को कहा । उनके उपदेशानुसार एक दिन ध्यान करते समय एक प्रकाण्ड ज्योति का दर्शन किया । अक्सर ज्योति दर्शन कर लेता हूँ । अच्छा माँ, माँ की दया क्या नहीं होगी ?"

माँ–वे तो ज्योति के रूप में तुम्हें दर्शन देते हैं । फिर किस बात की चिन्ता ?

भट्टाचार्य महाशय प्रायः ज्योति दर्शन करते हैं, इस बात का उल्लेख करते हुए उन्होंने माँ से पूछा–"यह सब देवता क्या बातें करते हैं ?"

माँ–ऋषि मुनिगण दर्शन देकर हमारी कामना पूर्ण करने में सहायता करते हैं।

वृद्ध–बीच–बीच में ध्वनि सुनाई देती हैं ।

माँ–उस ध्वनि का कोई ढंग हैं ?

वृद्ध–वह लम्बी ध्वनि होती हैं ।

माँ–उसे नाद कहते हैं । इस प्रकार का दर्शन श्रवण जिन्हें होता है, उसका भाग्य खूब अच्छा होता है ।

भट्टाचार्यजी ने आगे कहा–एक बार मेरा लड़का अस्वस्थ हो गया था । डाक्टरों ने जवाब दे दिया था । मैं माँ के कमरे में पूजा करने लगा । पूजा समाप्त होने के साथ ही लड़के को पसीना हुआ और बुखार दूर हो गया । इसके बाद फिर बुखार नहीं आया । एक बार विवाह के उपलक्ष्य में घर पर निमंत्रण का आयोजन हुआ था । ठीक इसी समय आसमान में बादल छा गये । बच्चे मेरे क्रियाकलाप से परिचित थे । उन लोगों ने मुझे क्रिया करने को कहा । मैं इनकी बातों को सुनकर क्रिया करना प्रारम्भ किया । माँ को खूब पुकारा। अन्त में देखा गया कि बादल छँट गये और धूप निकल आयी । ऐसी घटना अक्सर हो जाती थी । तुम्हारा नाम सुनकर आज मैं तुम्हें देखने चला आया । तुम्हें देखकर मैं बहुत तृप्ति अनुभव कर रहा हूँ । आज तुम्हें ध्यान में रखने का प्रयत्न करूँगा ।"

माँ–तुम भी तो माँ की मूर्ति हो ।

वृद्ध–सो कैसे ?

माँ–वर्ना माँ की पूजा कैसे कर पाते ?

वृद्ध–यह ठीक है ।

इतना कह कर वृद्ध हँसने लगे। शेष लोग उनका साथ देने लगे।

एक बोल में सब मिलता है

भट्टाचार्य ने पुनः कहना शुरू किया–"दुःख में माँ सांत्वना देती हैं । मैं माँ से केवल सांत्वना चाहता हूँ ।"

श्री श्री माँ इस प्रश्न का बिना उत्तर दिये, चुप बैठी रहीं ।

वृद्ध–आज मेरे लिए बड़े आनन्द का दिन है जो आनन्दमयी को पा गया हूँ । जरा दया रखियेगा । उम्र बढ़ने के साथ जरा उद्विग्न हो गया हूँ । जरा आप उपदेश दें ।

माँ–उपदेश तो एक ही है । जब तक पकड़कर रहा जा सके तब तक केवल एक को पकड़कर रहना चाहिए ।

वृद्ध–यह क्यों नहीं हो सकेगा ? मन में साहस है कि यह कर सकूँगा ।

माँ–यही आवश्यक है ।

वृद्ध–इस आशा से आया था कि मां से उपदेश सुनूँगा ।

माँ–पिताजी, बेटी कहीं कुछ कह पाती है ? बेटी एक ही बोल बोलती है–एक बोल में एक ही मिलता है । जरूरत है केवल एक लक्ष्य होना ।

वृद्ध–पक्षी एक बोल बोलता है, वह देख कहाँ पाता हूँ ?

माँ–मनुष्य एक बोली में ही देख पाता है । वे दर्शन देंगे, इसलिए वे एक बोली बुलवा लेते हैं, एक काम करवा लेते हैं । मेरा क्या है, क्या नहीं है, इसकी चिन्ता करने की जरूरत नहीं । मेरा कर्त्तव्य है केवल एक को लेकर रहना । एक नाम, एक ध्यान, एक चिन्ता लेकर एक लक्ष्य होना । अपने विश्वासों को दृढ़ करना होगा । दृढ़ विश्वास की आवश्यकता है जब कि उसका भयानक अभाव है । कर्म करके वासना को समाप्त नहीं किया जा सकता । एक के बाद एक करके अनन्त वासनाएँ हैं । केवल एक वासना लेकर रहने पर – केवल भगवान् को प्राप्त करने की वासना लेकर रहने पर, अन्य वासनाओं का लोप हो जाता है । जैसे डाली–पत्ते पर ध्यान न देकर दिन पर दिन पेड़ की जड़में पानी देते रहो तो देखोगे कि उस वृक्ष के पुराने पत्ते झड़कर नये पत्ते जन्म ले रहे हैं । उसी प्रकार दूसरी ओर लक्ष्य न रखकर केवल नाम करते रहने पर मनुष्य पूर्व जन्मों के संस्कारों से मुक्त होकर नया जीवन प्राप्त करता हैं ।

वृद्ध–आपको देखकर ऐसा लगता है जैसे आपको प्राप्त हो गया हूँ ।

माँ–(वृद्ध के प्रति निर्देश करती हुई) यह तो तुम्हें पा गया हूँ । तुम जिसे चाहते हो, वही यह मूर्ति है ।

इतना कहकर माँ खिलखिलाकर हँस पड़ी ।

आगे मां ने पुनः कहना प्रारंभ किया–व्याकुल होना होगा । व्याकुलता हमारा स्वभाव है । उन्हें पाने की व्याकुलता हम लोगों में अपने–आप आती है । स्वधन प्राप्त होने पर यह व्याकुलता चली जाती है । रुपया–पैसा या धन यह खराब नहीं है, अगर इससे असली चीज़ पाने के लिए कर्म किया जाय तो । अगर भगवान् की ओर लक्ष्य रहे तो रुपये–पैसे के द्वारा शरीर पुष्ट करना भी पाप नहीं है । चेष्टा से आसक्ति का त्याग नहीं होता । केवल उन्हें पाने की आसक्ति बढ़ाने पर अन्य आसक्तियों को छोड़ा जा सकता है । त्याग के लिये व्यस्तता कैसी ? जागतिक चीजों का स्वभाव ही त्याग है । आनन्द और शान्ति सभी के लक्ष्य हैं । यह बात सभी में है । इसका त्याग तो होता नहीं । जिसका त्याग होना है, वह हो जायगा ।

वृद्ध–आपसे एक नया उपदेश मैंने ग्रहण किया । 'एक को लेकर' रहना, एक लक्ष्य होना । यह एक आशा की बात है कि उन्हें पाया जा सकता हैं । पर अभी मार्ग बन्द है । मेरा समय समाप्त हो रहा है । अब मुझे जाना पड़ेगा ।

माँ–कहाँ जाओगे पिताजी ? जाना–आना है क्या ?

वृद्ध–(हँसकर) एक घर छोड़कर दूसरे घर में ।

माँ–तुम्हारा घर कौन सा है ?

वृद्ध इस प्रश्न का मर्म समझ नहीं सके और श्री श्री माँ की ओर देखने लगे ।

माँ–तुम्हारा घर श्वासोंका घर हैं । जब तक श्वास है तब–तक तुम्हारा घर हैं । इसके समाप्त होते हो घर टूट जाता है । पर जरूरत होने पर दूसरे घर में जा सकते हो ।

माँ की बातें सुनकर वृद्ध खूब प्रसन्न हो गया और कहा–"आपने जो कुछ कहा, वह सत्य है और यह बातें शास्त्र की हैं ।"

वृद्ध की शान्त–गम्भीर आकृति पर हर्ष–विस्मय के भाव एक साथ प्रस्फुटित हो गये । शाम हो गयी थी यह देखकर वे धीरे–धीरे चले गये । हमलोग बरामदे से कमरे के भीतर चले आये ।

शास्त्र और परमतत्त्व

दो संन्यासी श्री श्री माँ से मिलने के लिए आये । माँ ने उन लोगों को बैठने के लिए आसन देने को कहा । इनमें से एक संन्यासी कल भी आये थे । आप कुछ बोलते नहीं, केवल चुपचाप माँ की बातें सुनते रहते हैं । माँ के अधिक अनुरोध करने पर दो–एक बात कहते हैं । दूसरे संन्यासी पंजाब के रहनेवाले हैं । आप दर्शन–शास्त्रों का अध्ययन कर चुके हैं, आजकल नवद्वीप में न्यायशास्त्र का पाठ कर रहे हैं । इन लोगों की बातचीत हिन्दी में होती रही ।

संन्यासी ने पूछा – "माँ, जन्म–मृत्यु का क्या कारण है ?"

माँ–कारण तो केवल एक ही है । सब कुछ एक से जन्म ले रहा है, एक ही स्थिति प्राप्त कर रहा है । फिर एक ही में लय हो जा रहा है ।

यह उत्तर सुनकर संन्यासी सन्तुष्ट नहीं हुए । उन्होंने चिन्तन करना प्रारम्भ किया । माँ उनके साथ दो–चार बातें करने के बाद चुप हो गयीं ।

संन्यासी ने पुनः प्रश्न किया तो मां ने उत्तर दिया – "पिताजी, मेरे मुँह से हरवक्त जवाब नहीं निकलता । मेरे पास शास्त्रों का ज्ञान नहीं है जो आपके प्रश्नों का जवाब दे सकूँ । मैं कुछ भी नहीं जानती । तुम लोग मुझसे जो कुछ बुलवा लेते हो, वही बोल देती हुँ। तुम मुझसे कहलवा नहीं सके, इसलिए जवाब नहीं पा सके । यह तुम्हारी गलती हैं । मैं तो हमेशा कहा करती हूँ कि तुम लोग अच्छी–अच्छी बातें मेरे मुँह से निकलवा लो । तुम लोग सुनो और मैं भी सुनूँ ।"

अटल बाबू आदि जो लोग वहाँ मौजूद थे, उन लोगों ने संन्यासीजी को बताया–"माँ ने शास्त्रो का अध्ययन नहीं किया है । आप जो कुछ जानती हैं, वह सब अनुभूति से होता है अतएव माँ से शास्त्र सम्बन्धी बातें करने से कोई लाभ नहीं होगा । तत्त्वज्ञान तो अनुभूति के द्वारा होता है, शास्त्रों के चिन्तन से नहीं ।"

यह बात सुनकर संन्यासी ने कहा – "मैं तो माँ के निकट अनुभूति की बातें सुनने आया हूँ । 'मैं दोनों को मिलाकर यह जानना चाहता हूँ कि अनुभूति कितना शास्त्र सम्मत हैं ।"

संन्यासी ने पुनः मां से प्रश्न किया–"शास्त्रों में विभिन्न उक्तियाँ हैं । उनमें से कुछ परस्पर विरोधी है । इनमें से किसका अनुसरण करना उचित है ?"

माँ–शास्त्र की सभी उक्तियाँ सत्य है । साधक और साधना के माध्यम से जिसे अनुभव किया है, उसे ही शास्त्रों में व्यक्त किया है, पर वह व्यक्त कितना हुआ है ? (हँसकर) शास्त्रों को मैं टाइम टेबुल कहती हूँ । एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने के लिए कितने स्टेशनों से गुजरना पड़ेगा, यह टाइम टेबुलों में लिखा रहता है । लेकिन वह सब स्थान के नाम मात्र है । केवल नाम पढ़कर उसके बारे में कोई धारणा नहीं बनायी जा सकती । इसके अलावा एक जगह से दूसरी जगह तक जाने के मार्ग में जितने स्थानों से गुजरना पड़ता है, उनमें

से सभी के नाम टाइम टेबुल में नहीं रहते । केवल प्रधान–प्रधान स्थानों के नाम रहते हैं । शास्त्रों में भी उसी प्रकार साधन राज्यों की सारी बात नहीं हैं । केवल कुछ अवस्था की बात हैं । लेकिन इनमें से किसी एक अवस्था को प्राप्त कर लेने पर भीतर से जितनी अनुभूतियाँ आती हैं तथा एक अवस्था से दूसरी अवस्था तक जाने में जितने छोटे–बड़े असंख्य अनुभव होते है, इन सभी का वर्णन शास्त्रों में नहीं है। इसीलिए शास्त्रों की बातें साधन–राज्य की अंतिम बातें समझना सरासर गलत हैं । इसके अलावा शास्त्रों में भिन्न–भिन्न उक्तियाँ इसलिए हैं कि साधकों के भिन्न–भिन्न व्यक्तिगत संस्कार थे । आध्यात्मिक अनुभूति व्यक्तिगत संस्कार के अनुसार होती है । सभी की एक जैसी नहीं होती । इसीलिए कहती हूँ कि शास्त्र में जितना व्यक्त किया गया है, वह भी उतना ठीक है और जो व्यक्त नहीं हुआ है, वह भी उतना ही ठीक है । तुम लोग रसगुल्ला खाने के बाद यह बता सकते हो कि यह "इतना मीठा है," । "इतना मीठा है"– लेकिन रसगुल्ले का समस्त आस्वाद व्यक्त नहीं होता उसी प्रकार परम–तत्त्व को अनुभव करने के बाद उसके बारे में सम्पूर्ण रूप से व्यक्त नहीं किया जा सकता ।

संन्यासी–ऐसी हालत में मेरा क्या कर्तव्य है ? परमपद पाने के लिए हमें क्या करना चाहिए ?

माँ–भगवान् को प्राप्त करने के लिए गुरु द्वारा बताये मार्ग पर चलना एक मात्र कर्त्तव्य है । कार्य आरम्भ करने पर सब अपने आप हो जाता है । मान लो, तुम्हें गंगा–घाट जाना है। किसी व्यक्ति से तुमने रास्ता पूछा । उसने तुम्हें मार्ग बता दिया । अगर तुम चलते–चलते गलत रास्ते की ओर मुड़ जाते हो तब राह चलते लोग भी पुनः ठीक रास्ता बता देंगे या राह चलते किसी और से पूछ कर तुम ठीक समय पर गंगा किनारे पहुँच जाओगे । असल कार्य है–

चलना । फलस्वरूप जिन्होंने तुम्हें पहले पहल मार्ग बताया, वे अपने साथ तुम्हें गंगा किनारे तक भले ही न लायें, पर तुम अपने प्रयत्नो से गंगा किनारे तक पहुच जाओगे । धर्म के बारे में यही हाल है। एक मार्ग पर चलना प्रारम्भ करने पर नाना प्रकार की सहायता प्राप्त कर सकोगे।

इस प्रकार बातें समाप्त होने पर माँ जलपान करने चली गयीं। दोनों संन्यासी भी प्रस्थान कर गये ।

विमला माँ का नवद्वीप आगमन

आज शाम के बाद विमला माँ को साथ लेकर आनन्द भाई[1] नवद्वीप आ गये । श्री श्री माँ इन्हें तथा निर्मला माँ, हेम भाई आदि को साथ लेकर भोजन करने बैठी । उस समय आपस में परिहास होता रहा। भोजन समाप्त होने पर इन लोगों को साथ लेकर कमरे में आयीं। बीच में माँ बैठीं और उनकी दाहिनी ओर विमला माँ और आनन्द भाई तथा बायीं और निर्मला माँ और हेम भाई बैठे थे ।

माँ परिहास करती हुई बोलीं–"निर्मल आकाश में विमल आनन्द।"

इन लोगों को इस तरह बैठा देखकर यतीश बाबू की माँ ने कहा–"आज हम लोग दुर्गा मूर्ति देखकर धन्य हुए । लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा सभी आज उपस्थित हैं ।"

माँ हँसती हुई बोलीं–"असुर–सिंह कहाँ हैं ?"

स्वामी शंकरानन्द ने कहा–"द्वारिका गये हुए हैं ।"

सभी लोग अट्टहास कर उठे । बाबा भोलानाथ इन दिनों द्वारिका रवाना हुए थे ।

---

१. आनन्द भाई विमला माँ के पति हैं । ये लोग भी आद्यापीठ के श्री श्री आनन्दा ठाकुर महाशय के शिष्य हैं । पहले आनन्द भाई गृहस्थी से अलग होकर गुरु के निकट रहने लगे । कुछ दिनों बाद विमला माँ ने भी पति के मार्ग का अनुसरण किया । आजकल ये लोग भी आद्यापीठ में ही रहते हैं।

माँ–(हँसकर) तुमने भोलानाथ को सिंह कहा । ठहरो, भोलानाथ को आने दो ।

शंकरानन्द–मैंने ठीक ही कहा है । भोलानाथ के अलावा तुम्हारा गुरुभार और कौन बर्दाश्त कर सकता है ? जिन लोगों को मेरी बात पर हँसी आयी है, वे लोग देवी के वाहन सिंह के वास्तविक मर्म से परिचित नहीं हैं । मैं दृढ़ता पूर्वक कहता हूँ कि इस बात को सुनकर भोलानाथ जी असन्तुष्ट नहीं होंगे । वे मेरी बातों का अर्थ समझ लेंगे।

माँ–अच्छा, असुर कौन हैं ?

शंकरानन्द (वक्षस्थल फुलाते हुए) मैं । असुर तो मैं हूँ ।

सभी पुनः हो–होकर हँस पड़े ।

माँ पुनः विमला माँ और निर्मला माँ के साथ विनोद करने लगीं । हेम भाई चुपचाप बैठे थे । आनन्द भाई बराबर बातें कर रहे थे । नाना प्रकार की कविताएँ सुनाते रहे । मैं कुछ देर तक बैठा आनन्द भाई की बातें सुनाता रहा । उनकी सारी बातें नहीं समझ सका । अन्त में सोने चला गया ।

२८ दिसम्बर, सन् १९३६ ई. सोमवार । आज सवेरे माँ के यहाँ गया । कल यतीश बाबू कलकत्ता चले गये हैं । आज उषाकीर्तन नहीं हुआ । निर्मला माँ और आनन्द भाई माँ के निकट बैठे थे । निर्मला माँ तो एक प्रकार से चुपचाप बैठी रहीं । उसे लक्ष्य करके आनन्द भाई नाना प्रकार की बातें कहने लगे ।

सवेरे का वक्त इसी तरह की बातचीत से समाप्त हो गया ।

आज के लिए श्रीयुक्त शक्तिपद लाहिड़ी नामक एक इनकम टैक्स अफसर अपने यहाँ भोजन करने का निमंत्रण दे गये हैं । अपने यहाँ वे श्री श्री माँ को भोग देने का प्रबन्ध कर चुके हैं । गंगा के उस पार महेशगंज में उनका घर हैं । नाव से जाना पड़ेगा । नाव का प्रबन्ध भी वे कर गये हैं । महेशगंज जाने के पूर्व माँ को सामान्य भोग धर्मशाले में दिया गया । हम लोगोंने प्रसाद ग्रहण किया ।

भाव द्वारा सेवा ही वास्तविक सेवा है

जिस समय माँ को भोग दिया जा रहा था, ठीक उसी समय एक सज्जन सपत्नीक आये । सुना कि आप काटोवा स्थित सहकारी समिति के इन्स्पेक्टर हैं । आपने गौर-निताई की मूर्ति बनवाने का आर्डर दिया था । आज उसे लेने के लिए आए हैं । श्री श्री माँ के बारे में सुनकर दर्शन करने चले आये हैं । उक्त सज्जन देखने पर सरल और उनकी पत्नी भक्तिमती लगीं । श्री श्री माँ का भोग समाप्त होने पर माँ के पास आकर उन्होंने प्रणाम किया ।

माँ ने कहा-"तुम्हें कहीं देखा हैं, ऐसा लगता हैं ?"

लेकिन उक्त सज्जन यह नहीं बता सके कि इसके पूर्व कब-कहाँ माँ के साथ मुलाकात हुई थी । उन्होंने नवद्वीप आने का कारण बताया । सुनकर माँ संतुष्ट हो गयीं ।

सज्जन-माँ, गृही लोगों को कैसे चलना चाहिए, इस सम्बन्ध में कुछ उपदेश दीजिये ।

माँ-बात तो एक ही है । तुम ठाकुर को लेने आये हो । ठाकुर अगर साथ-साथ रहें तो उपदेश की कोई आवश्यकता नहीं है । साथ रहना ही असली बात है । साथ छूट जाने से मुश्किल होगी । सर्वदा ठाकुरजी की सेवा करते रहना ।

सज्जन-किस तरह सेवा करना चाहिए, इस बारे में उपदेश दीजिये ।

माँ-ठाकुर साथ रहने पर उपदेश भीतर से आता है । मन लगाकर सेवा करने का प्रयत्न करना । अगर ऐसा हुआ तो प्राण आ जायगा । सुना होगा, लोग कहा करते हैं कि मन-प्राण से सेवा करना, वह ऐसा ही होता है । सर्वदा मन लगाये रहने का प्रयत्न करना ।

इसके अलावा सेवा करना एक बात है और सेवा होना अलग बात है । जो लोग सेवा करना जानते है, उनसे सेवा करने के नियम समझकर कार्य आरम्भ करना चाहिए । कार्य करते–करते भाव उदय होता है। आगे चलकर उस भाव के द्वारा सेवा होती रहती है । भाव के द्वारा हुई सेवा असली सेवा है । भाव के माध्यम से सेवा करने का कोई साधारण नियम नहीं है । यह सम्पूर्ण व्यक्तिगत है । इसके बारे में किसी उपदेश की जरूरत नहीं । नियम के अनुसार सेवा करते–करते जब भाव का उदय होता है तब किस भाव से सेवा करना चाहिए, यह भाव ही बता देता है । देखा होगा, सभी एक ही पुस्तक पढ़ते हैं, इनमें कोई भाषण दे लेता है और कोई कविता लिखता है । वह भाषण या कविता इन लोगों ने किसी पुस्तक में नहीं पढ़ा हैं । यह सब उनके भीतर से आता हैं । सेवा के सम्बन्ध में भी ऐसा ही जानना। प्रकृत सेवा, भाव के माध्यम से सेवा किसी को सिखाना नहीं पड़ता। यह भीतर से आता हैं । (उक्त सज्जन की पत्नी की ओर देखती हुई) माताजी जिस प्रकार पति–सेवा करती हैं, उसी प्रकार सभी लोगों की सेवा करनी चाहिए । हम सब तो महिला हैं । स्वामी तो केवल एक हैं । भगवान् ही हमारे स्वामी हैं । वे ही एक मात्र पुरुष हैं और बाकी लोग महिला हैं ।

महेशगंज जाने का समय हो गया था । हम लोग रवाना हो गये । श्री श्री माँ आगे–आगे चल रही थीं । हम लोग उनके पीछे–पीछे चल रहे थे । नाव तैयार थी । मार्ग में एक महिला ने पूछा–"माँ, मेरा इस तरह का कर्म (सांसारिक कर्म) और कितने दिन बाकी रह गया ?"

माँ–जितने दिन संसार हैं । यह गठरी बिना खोले काम नहीं चलेगा। सारी कठिनाई इसके कारण है ।

महिला–मेरा संस्कार अब और कितने दिन हैं ?

माँ–अभी कुछ दिन और है ।

महिला–अब सह्य नहीं हो रहा है ।

माँ–नहीं, अभी शक्ति है। 'नहीं हो रहा है' कहने की शक्ति है।

इतना कहने के बाद माँ हमलोगों की ओर देखती हुई हँसने लगीं। माँ की बातें सुनकर लगा जैसे भगवान् पर निर्भर रहने का व्यक्तिगत प्रयत्न लेशमात्र रहते बोध नहीं आता ।

हम लोग नाव पर सवार हुए । दो या अढ़ाई घण्टे बाद हम लोग शक्तिपद बाबू के घर पहुँचे । वहाँ माँ को भोग दिया गया । हम लोगों ने प्रसाद ग्रहण किया । शाम होने के कुछ पहले हमलोग वहाँ से रवाना हुए । नदी के किनारे आकर देखा कि सभी नाव पर आराम से बैठे हुए हैं । माँ की नाव पर सबसे अधिक भीड़ थी । एक नाव पर प्राणकुमार बाबू, अटल बाबू के बहनोई आदि कुछ लोग बैठे थे । मैं इसी नाव पर जाकर बैठ गया । नाव छूटने के कुछ पहले माँ तीन नावों को पार करती हुई मेरे नाव पर आकर खड़ी हो गयीं ।

यहाँ आकर बोलीं–'इस नाव पर जितने लोग बैठे हैं, सभी निरीह हैं । इनका मुँह कभी नहीं खुलेगा कि माँ, तुम हमारी नाव पर आ जाओ ।'

इसे कहते हैं अहैतुकी कृपा : शाम होने के कुछ देर बाद नवद्वीप पहुँचे तो देखा–खुकुनी दीदी, स्वामी अखण्डानन्द तथा विनय भूषण सपत्नीक आये हैं । माँ का दर्शन करने के लिए घाट किनारे प्रतीक्षा कर रहे हैं । धर्मशाला तक पहुँचने में रात हो जाने के कारण आज कोई बाहरी व्यक्ति मौजूद नहीं था । केवल आपस के लोग माँ के निकट बैठे ।